Volume-2, Issue-2, April-June 2026

ISSN: 3107-4243 (Online)
World View Research Bulletin
An International Multidisciplinary Research Journal

भारतीय चित्रकला का शास्त्रीय विश्लेषण

नमिता गार्गी[1], शोधार्थी, एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह मध्य प्रदेश

डॉ. प्रदीप कुमार निवोरिया[2] शोध निर्देशक, एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह मध्य प्रदेश

सारांश–

चित्रकला का अर्थ शिल्प कौशल की प्रक्रिया से युक्त सुंदर एवं सुखद सृजन है। कला हृदय को आनंद की अनुभूति कराती है। "भारतीय दर्शन में कला को सत्यम शिवम सुंदरम रूप में माना गया है।" प्रकृति के प्रति रचना तथा जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप में कला दृष्टिगोचर होती है, यह जीवन का अनुपम और अमूल्य अंग है।

संपूर्ण जगत में मनुष्य आनंद स्वरूप आत्मा का सबसे श्रेष्ठतम अंश है। यही कारण है कि मनुष्य का समस्त क्रियाकलाप आनंद अनुभूति के लिए ही होता है। आनंद अधिगम के लिए उदभोत अनेक पदार्थ में ललित कलाओं का महत्व सहृदय समाज मे छिपा हुआ नहीं है। सभी कलाएँ अपने आप को श्रेष्ठ करने का प्रयास करती रहती हैं, किंतु प्रथम दृष्टि आँखों पर तत्काल प्रभाव डालने वाली कोई चीज है, तो वह चित्र या रेखाएँ ही हैं, जो चक्षुओं को तुरंत आकर्षित करते हैं। भाषा की उत्पत्ति से पूर्व इन चित्रों ने ही सम्प्रेषण का कार्य किया। "मनुष्य की कृति जो आनंद प्रदान करती हो, वह कला है।"कला का उद्भव प्रागैतिहासिक काल से माना जाता है। प्रागैतिहासिक गुफाओं से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्य इसी तथ्यों की पुष्टि करते हैं। मनुष्य के जन्म के साथ ही उसके भीतर संप्रेषण की प्रवृत्ति थी। अपनी भावनाओं के संप्रेषण हेतु प्रारंभिक मानव ने रेखांकन को इसका माध्यम बनाया।

शब्द कुंजी:– *रूप, कर्म, शिल्प आलेख्य, चारुशिल्प, ललितकला, रूपलेखा, कल्पवल्ली, चित्रगतचमत्कार, ऋतुचित्र, सत्यचित्र, वैन्णिकचित्र, नागरिकचित्र, मिश्रचित्र, कारुचित्र, प्रकृति चित्र, चित्र पट, प्रतिबिंब चित्र, कामदेवपट, लक्ष्मीपट, कुंडलितपट, कल्पवल्ली, सदृश्य चित्र, प्रतिछन्दक चित्र, रेखा चित्र, तिन्डकचित्र, आलेख्य चित्र, रुपलेख्य चित्र, नारिचित्र, चित्रपुत्रिका, लेख्यपुत्रिका*

प्रस्तावना:–"कला संस्कृत व्याकरण भाषा से संबंधित है। इसकी उत्पत्ति 'कल' धातु से मानी जाती है जिसका अर्थ प्रेरित करना होता है।" कुछ विद्वान इसकी उत्पत्ति 'क' धातु से मानते हैं। संस्कृत साहित्य में इसका प्रयोग अनेक अर्थों में हुआ है। कला का यथार्थपूर्ण प्रयोग सर्वप्रथम भरतमुनि द्वारा अपनी पुस्तक 'नाट्यशास्त्र' में किया गया। जिसे संभवतः प्रथम शताब्दी में लिखा गया था। भरतमुनि से

पूर्व कला शब्द का प्रयोग काव्य को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के चातुर्य कार्य के लिए होता रहा था और इस चातुर्य कार्य के लिए विशिष्ट शब्द या शिल्प शब्द का प्रयोग किया जाता था। जीवन से संबंधित कोई उपयोगी व्यापार ऐसा नहीं था जिसकी गणना शिल्प में ना हो। "अंग्रेजी भाषा में कला को 'आर्ट' कहा जाता है और लैटिन भाषा में 'आर्टम' और आर्ट से कला को व्यक्त किया जाता है। इन सभी शब्दों का अर्थ वही है, जो संस्कृत भाषा में मूल धातु 'अर' के हैं और 'अर' का अर्थ है बनाना, पैदा करना या रचना करना।"

चित्रकला की उत्पत्ति,पौराणिक कथाओं के अनुसारः—

पुरातन काल में भयजीत नामक एक धर्मपरायण राजा गांधार राज्य में राज किया करते थे। उनके राज्य में अकस्मात, एक ब्राह्मण पुत्र की मृत्यु हो गई। पुत्र शोक से व्याकुल हो ब्राम्हण वहाँ की तत्कालीन प्रथा के अनुसार राजा के पास गया और उसने राजा से विनती की, कि उसके पुत्र को प्राण दान दिया जाए और उसका पुत्र जीवित हो जाय। राजा उसके पुत्र को जीवित करें क्योंकि उसके पुत्र की अकाल मृत्यु हुई है जिसका कारण आपके राज्य में व्याप्त अधर्म और अत्याचार है, और अगर आप स्वयं को प्रजापालक और धर्मात्मा मानते हैं, तो मेरे पुत्र को यमलोक से वापस लेकर आएँ। यह सुनकर सम्राट को समझ नहीं आया कि वह क्या करें फिर भी उसने क्षत्रिय धर्म निभाते हुए मृत पुत्र को जीवित करने की कोशिश की। अपने योग बल से यमराज को बुलाया और ब्राह्मण पुत्र को जीवित करने की प्रार्थना की, किंतु यमराज ने उनकी प्रार्थना अस्वीकृत कर दी। यमराज द्वारा नकारात्मक जवाब सुनकर राजा ने युद्ध की घोषणा की। दोनों में युद्ध हुआ। युद्ध में यमराज की पराजय हुई, फिर भी उसने ब्राह्मण पुत्र को जीवन दान देने से इनकार किया। यह देख ब्रह्मा स्वयं अवतरित हुए और ब्राह्मण पुत्र को जीवित न कर पाने का कारण भयजीत को सुनाया। कारण था कि उस ब्राह्मण पुत्र के शरीर को अग्नि को समर्पित कर दिया गया था अब अगर प्राण दान दिया भी जाए तो कैसे और कहाँ? ब्रह्मा नें इसका निदान निकाला। ब्राह्मण पुत्र की चित्र की रचना राजा भयजीत द्वारा करवाया। राजा के द्वारा चित्र बनाए जाने के बाद ब्रह्मा ने उस चित्र में प्राण संचार कर दिया तथा ब्रह्मा जी ने राजा भयजीत को यह वरदान दिया कि तुमने नग्न प्रेतों पर जीत हासिल की है। अतः आज से तुम्हारा नाम नग्नजीत हुआ और यह चित्र इस सृष्टि का प्रथम चित्र है। इस कला द्वारा जीवजगत का बहुत कल्याण होगा और आप भी इसी कारण पूजनीय होंगे। राजा नग्नजीत नें अंग प्रत्यांगों की माप,चित्रों के लक्षण तथा इसकी उत्पत्ति जाननें की जिज्ञासा की इसके जवाब में ब्रह्माजी नें कहा सर्वप्रथम वेदों और यज्ञों की उत्पत्ति हुई और बताया सर्वप्रथम मैंने हीं मानवीय चित्र की रचना की है। यदि आप चित्रकला के सम्पूर्ण नियमों और लक्षणों को जानना चाहते हैं, तो उसके लिए परम गुरु देवशिल्पी विश्वकर्मा से सीखें। राजा नग्नजीत नें ब्रह्मा के आदेशानुसार देवशिल्प विश्वकर्मा से इस कला की शिक्षा ली। "देवशिल्प नें

ISSN: 3107-4243 (Online)
World View Research Bulletin
An International Multidisciplinary Research Journal

चित्रकला की उत्पत्ति का वर्णन किया और कहा जीवजगत की सृष्टि के बाद ब्रह्माजी ध्यानमग्न हो गए, उनके ध्यान से ही विष्णु, महादेव तथा अन्य इंद्राणी देवगण दिव्य प्रभाव से सम्पन्न हुए तथा अपने प्रभाव से अपनी प्रतिछवि आकृतियों का आविर्भाव किया तथा पृथक–पृथक रूप धारण किया। साथ ही वस्त्रों, आभूषणों तथा उनके अनुरूप विभिन्न प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों से अलंकृत हुए। देवगण अपनी प्रतिछवि देख कर आनंदित हुए, तब ब्रह्मा नें कहा जीव–जगत इन्हीं चित्रों की उपासना से कृतज्ञ होंगे।"

एक अन्य कथा के अनुसार चित्र विद्या की देवी का वर्णन करते हुए चित्र लक्षण के दूसरे अध्याय में विश्वकर्मा नग्ज्जित संवाद में बताया गया है कि संसार की कल्याण कामना हेतु ब्रह्मा की प्रेरणा से इंद्राणी देवताओं ने अपने–अपने अस्त्र शस्त्रों और मुद्राओं सहित अपनी अपनी प्रति कृतियाँ बनाकर ब्रह्मा को दीं, जिनको ब्रह्मा ने अर्चन पूजन हेतु मृत्युलोक में भेज दिया।

दूसरी कथा के अनुसार धर्म पुत्र नर और नारायण अपने तप में लीन थे। स्वर्ग की अप्सराओं ने उनके तप को तोड़ना चाहा तथा अपने विलास आदि काम चेष्टाओं से उन्हें पदच्युत करने की चेष्टा की। ऋषि अप्सराओं की मनोवृति जानते हुए अपने तेज से उन्होंने अपने उरु पर आम्ररस से एक अप्सरा का चित्र बनाया और उसमें जान डाली, जब अप्सराओं नें इस सर्वांगसुंदरि को देखा तो वे दंग रह गई क्योंकि वह अत्यंत खूबसूरत थी। उनकी सुंदरता के आगे बाकी अप्सराओं का कोई मोल नहीं था। उनकी सुंदरता को देखकर सारी अप्सराएँ अपने कर्म पर लज्जित हुई और उनका घमंड भी टूटा। चूँकी सुंदरी ऋषि के उरु से उत्पन्न हुई थी इसलिए उसे उर्वशी के नाम से जाना गया। बाद में महामुनि ने चित्रशास्त्र के सभी लक्षणों से परिपूर्ण इस चित्रकर्म को विश्वकर्मा को सौंप दिया। "इस कथा के अनुरूप चित्रकला का जन्म महामुनि नर नारायण द्वारा हुआ। "

शिल्पएवं कला विषयक ग्रंथों मेचित्रकलाः–

चित्रकला की प्राचीन स्थिति का अध्ययन करने के लिए हमें शिल्प–विषयक ग्रंथों की सहायता लेनी पड़ती है। शुरुआत में कला शब्द का प्रयोग सभी तरह के चातुर्य कार्य के लिए होता था तथा इस चातुर्य कार्य के लिए विशिष्ट शब्द शिल्प का प्रयोग किया जाता था। प्राचीन काल में चित्रकला के लिए अनेक नामों का वर्णन मिलता है – चित्र,रूप, कर्म, शिल्प आलेख्य, चारुशिल्प, ललितकला, रूपलेखा, कल्पवल्ली, चित्रगतचमत्कार आदि, चित्रकला के अभिप्राय थे।

शिल्प रत्नाकर के अनुसारः–

शिल्प रत्नाकर के अनुसार चित्र को तीन वर्गों मे बाँटा गया है–

1. चित्र– चित्र आधार में संपूर्ण अंगों के चित्रण को चित्र कहते हैं।

ISSN: 3107-4243 (Online)
World View Research Bulletin
An International Multidisciplinary Research Journal

2. अर्धचित्र – चित्र आधार के अर्धभाग के चित्रण को अर्धचित्र कहा जाता है।
3. चित्राभाष–शरीर के अंगों का चित्रण चित्राभाष कहलाता है।

बौद्ध साहित्य के ग्रंथ, विनयपीटक में चित्रकला की एक अन्य श्रेणी है–

लेप्यचित्र, जो भित्तिचित्र का ही एक प्रकार थी। इसके अतिरिक्तऋतुचित्र, सत्यचित्र, वैन्णिकचित्र, नागरिकचित्र, मिश्रचित्र, कारुचित्र, प्रकृति चित्र, चित्र पट, प्रतिबिंब चित्र, कामदेवपट, लक्ष्मीपट, कुंडलितपट, कल्पवल्ली, सदृश्य चित्र, प्रतिछन्दक चित्र, रेखा चित्र, तिन्डकचित्र, आलेख्य चित्र, रुपलेख्य चित्र, नारिचित्र, चित्रपुत्रिका, लेख्यपुत्रिका, सचरित चित्र (महापुरुषों के चित्र) आदि विषयों का वर्णन भी चित्रकला शब्द के लिए ही प्रकट होता है।

मानसोल्लास में वर्णित चित्रः–

मानसोल्लास में चार प्रकार के विशिष्ठ चित्रों की व्याख्या है।

1. विद्धचित्र –प्रति छवि जो दर्पण में प्रतिबिंब के समान, समान आकृत के हो।
2. अविद्धचित्र– जिसे मन के कल्पना के आधार पर बनाए जाते हों।
3. रस चित्र– वह चित्र जो रस की अभिव्यक्ति के लिए चित्रित किए जाते हों।
4. धुलिचित्र– भूमि पर चित्रित किए जाते हो जैसे अल्पना चौक पुरना सांझी आदि।

इन श्रेणियों मे विद्धचित्रों की महत्वता सर्वाधिक थी।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण में वर्णित चित्रः–

सत्यम – वृताकार क्षेत्र में सच्ची घटना का चित्रण सत्यम कहलाता है।

वैण्यिकम–वर्ग क्षेत्र मे कुशलपूर्वक रचित सुडौल और आनुपातिक चित्रों को वैण्यिकम चित्र कहा जाता था।

नगरम–वृत के क्षेत्र मे आभूषणों से परिपूर्ण रचित चित्र, नगरम कहे जाते थे।

मिश्रित– जिन चित्रों में सत्यम,वैण्यिकम तथा नगरम सभी चित्रों के लक्षण विद्यमान हों वे मिश्रित चित्र कहे गए।

श्री रामकृष्ण दास नें समस्त चित्रों को प्रमुख तीन श्रेणियों में विभक्त किया था जिनके नाम थे–

1. पट चित्र –कपड़ों पर बनाए जाने वाले चित्र, पटचित्र कहलाते थे।
2. फलकचित्र – लकड़ी पत्थरों के टुकड़े तथा हाथी दाँत पर बनें चित्र, चित्रफलक की श्रेणी मे आते थे ।
3. भित्ति चित्र– भित्तियों पर बनाए जानें वाले चित्र को भित्तिचित्र कहा जाता था।

ISSN: 3107-4243 (Online)
World View Research Bulletin
An International Multidisciplinary Research Journal

इस परंपरा के श्रेष्ठ ग्रंथों में,ललित विस्तार के बाद कामसूत्र का स्थान प्रथम आता है। कामसूत्र कला विषय का एक प्रौढ़ और प्रामाणिक ग्रंथ है। जिसमें कला के वर्गीकरण और उसकी संख्या को निर्धारित करने के संबंध में विभिन्न मतों का विश्लेषण किया गया है, उसके मूल में कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। ललित विस्तार से कला के व्यापक भावनाओं का तो पता चलता है किंतु वात्सयायन की कला विवेचना ललित विस्तार की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक और मानक है। उसमें कला को ललित और उपयोगी दो भागों में अलग किया गया है और कारीगरी (कारूकला) तथा पेशों (क्रियाओं) के आधार पर समाज के विभिन्न जाति समूह का निर्माण होना बताया गया है। हमारे धर्म ग्रंथों में वर्ण व्यवस्था के विभाजन का आधार भी यही माना गया है। कला का एकमात्र उद्देश्य व्यवसाय, चातुर्य, चमत्कार कथा कौशल न हो कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का भी साधन माना गया है। इस प्रकार कलाकृति के प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत में जनजीवन में कला तथा शिल्प को एक लोकप्रिय विषय के रूप में स्थान प्राप्त था और हमारे साहित्यकारों ने उसपर अनेक ग्रन्थों की रचना कर कला शिल्प की संविधाओं को भिन्न भिन्न दृष्टियों से प्रस्तुत किया है।

शास्त्रों मेंनिर्धारित कलाओं की संख्याः–

प्राचीन काल में शास्त्रों में कलाओं की संख्या निर्धारित की गई थी, जैसे वात्सायन के कामसूत्र में 64 कलाओं का वर्णन है। ललित कलाओं में86 शुक्र नीति में64 कालिका पुराण में 64 का काव्यशास्त्र आचार्य दंडी कृत मे 64 अग्नि पुराण में 64 बौद्ध धर्म जैन धर्म मे 64 कलाओं का वर्णन प्राप्त होता है। आचार्य वात्सयायन के कथन से हमें ज्ञात होता है कि उस समय तक इस विषय पर प्रचूर साहित्य उपलब्ध था। "प्रजापति का एक लाख अध्याय वाला कोई अज्ञातनामा ग्रंथ इस विषय का प्रथम ग्रंथ था। उनको मनु बृहस्पति,नंदी आदि आचार्यों ने अपने–अपने ढंग से उपनिबद्ध किया। नंदी का ग्रंथ सहस्त्र अध्याय का था उसको श्वेतकेतु ने 500 अध्यायों में और उनको भी ब्राभव्य पांचाल ने 150 अध्यायों में संक्षिप्त किया। इस ग्रंथ में सात अधिकरण थे, इन्हीं पूर्ववर्ती ग्रन्थों का सार–संकलन कर वात्सयायन ने कामसूत्र की रचना की।" वात्सयायन की ग्रंथावली में ललित विस्तार के विविध कलाओं की संख्या 64 है। पहले कलाओं के संबंध में जो अव्यवस्था थी उसको वत्सयायन द्वारा ही पहले पहल दूर किया गया। उन्होंने कलाओं को प्रमुख दो भागों में विभक्त किया–ललित कलाएँ और उपयोगी कला। वात्सायन द्वारा निर्धारित एवं वर्गीकृत कलाओं का महत्व इसी में है कि पुर्ववर्ती साहित्य मे जहाँ भी कलाओं की चर्चा की गई है, उसका अर्थ वात्सयायन द्वारा निर्देशित कला से ही रहा है। कालांतर मे भी इसी को आधार समझ कर गुणीजनों ने कला को दो वर्गों मे विभाजित किया है।

ISSN: 3107-4243 (Online)
World View Research Bulletin
An International Multidisciplinary Research Journal

निष्कर्षः– चित्र विधा की सृष्टि मानवता के भावनात्मक सौन्दर्य के कारण फलित हुई उससे संसार में क्रूरता और निर्ममता की जगह ममता तथा सहृदयता की स्थापना हो जिससे मनुष्य में अनुराग प्रियता और सौन्दर्य जिज्ञासा का विकास हुआ। व्यक्ति और समाज के कल्याण मंगल कामना में चित्र विद्या का सहयोग सदैव बना रहा, इसीलिए परंपरा में उसका आदर सम्मान और सम पूजन होता रहा। भारतीय चित्रकला केवल मनोरंजन यादृश्य अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बल्कि यह भारतीय समाज धर्म दर्शन और सांस्कृतिक चेतना का दर्पण भी है प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक चित्र कला में आध्यात्मिकता प्रतीकात्मकता और सौंदर्य बोध का विशेष समन्वय देखने को मिलता है। भारतीय चित्र कला भारतीय संसति की अमूल्य धरोहर है जिसने परंपरा और आधुनिकता के मध्यसेतु का कार्य किया है इसके शास्त्रीय तत्व आज भी समकालीन कला को प्रेरणा प्रदान करते हैं तथा भारतीय संस्कृति पहचान को सुदृढ़ बनाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. मालवीय, बद्रीनाथ, विष्णु पुराण मे चित्रकला, इंडियन प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, प्रयाग
2. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय चित्रकला का इतिहास, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. स. 1963
3. नायक, लक्ष्मी नारायण, कला सैद्धांतिक,द्वितीय संस्करण, 1994
4. बाजपेयी, राजेंद्र, सौन्दर्य, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,1998
5. प्रताप, डॉ. रीता, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 29वां संस्करण, 2018, पृ.4
6.शुक्ल,रामचंद्र,कला और आधुनिक प्रवृतियाँ ,हिन्दी समिति ग्रंथमाला–17,लखनऊ
7. शास्त्री, प्रो.डॉ. चारूदेव, 'श्रीविष्णुधर्मोत्तरपुराणम', तृतीय खण्ड, नाग पब्लिशर्स, नई दिल्ली, वर्ष 1985
8.चतुर्वेदी, डॉ.गोपाल मधुकर, 'भारतीय चित्रकला: ऐतिहासिक संदर्भ', साहित्य संगम, इलाहाबाद, 1999